विबुध श्रीधर एवं उनका पासणाहचरिउ

डा० राजाराम जैन, जैन कालेज, आरा (बिहार)

स्रोत

संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषाओंके कवियोंमें भगवान पार्श्वनाथका जीवन चरित बड़ा ही लोकप्रिय रहा है। आगम साहित्य एवं विविध महापुराणोंमें उनके अनेक प्रासंगिक कथानक तो उपलब्ध होते ही हैं, उनके अतिरिक्त स्वतन्त्र, सर्व प्रथम एवं महाकाव्य शैलीमें लिखित जिनसेन (प्रथम) कृत पार्श्वाभ्युदय-काव्य[1] (वि० सं० ९ वीं सदी) एवं वादिराजकृत पार्श्वनाथचरितम्[2] (वि० सं० १०८२), संस्कृत भाषामें, देवभद्र कृत पासणाहचरियं[3] (वि० सं० ११६८) प्राकृत भाषामें तथा कवि पद्मकीर्ति कृत पासणाहचरिउ[4] (वि० सं० ११८१) अपभ्रंश भाषामें उपलब्ध हैं। इन काव्य रचनाओंसे परवर्ती कवियोंको बड़ी प्रेरणा मिली और उन्होंने भी विविध कालों एवं विविध भाषाओंमें एतद्विषयक अनेक रचनाएँ लिखीं, जिनमेंसे माणिक्यचन्द्र[5] (१३ वीं सदी), भावदेवसूरि[6] (वि० सं० १३५५), असवाल[7] (१५ वीं सदी), भट्टारक सकलकीर्ति[8], (वि० सं० १५ वीं सदी), कवि रइधू[9], (वि० सं० १५-१६ वीं सदी), कवि पद्मसुन्दर[10] एवं हेमविजय[11], (१६ वीं सदी) एवं पण्डित भूधरदास[12] (१८ वीं सदी) प्रमुख हैं।

पार्श्वनाथचरित सम्बन्धी उक्त रचनाओंकी परम्परामें हरयाणाके महाकवि विबुध श्रीधर कृत 'पासणाहचरिउ' का भी विशेष महत्व है किन्तु अद्यावधि वह अप्रकाशित रही है। प्रस्तुत निबन्धमें उसी पर कुछ प्रकाश डालनेका प्रयास किया जा रहा है। इसका कथानक यद्यपि परम्परा प्राप्त ही है किन्तु कथावस्तु गठन, भाषा, शैली, वर्णन-प्रसंग, समकालीन संस्कृति एवं इतिहास सम्बन्धी सामग्रीकी दृष्टिसे यह रचना अद्वितीय सिद्ध होती है।

उक्त 'पासणाहचरिउ' की एक प्रति आमेर-शास्त्रभण्डार, जयपुरमें सुरक्षित है, जिसमें कुल ९९ पत्र हैं। इन पत्रोंकी लम्बाई एवं चौड़ाई १०" × ४½" है। उसके प्रत्येक पत्रमें १२ पक्तियोंमें ३५-४० वर्ण हैं। इनका प्रतिलिपि काल वि० सं० १५७७ है। यह प्रति शुद्ध एवं स्पष्ट है।[13]

कवि नाम निर्णय

जैन साहित्यमें लगभग आठ विबुध श्रीधरोंके नाम एवं उनकी लगभग उतनी ही कृतियाँ उपलब्ध होती हैं। यथा : १. पासणाहचरिउ, २. वड्ढमाणचरिउ, ३. सुकुमालचरिउ, ४. भविसयत्तकहा, ५. भविसयत्तपंचमीचरिउ, ६. भविष्यदतपंचमीकथा, ७. विश्वलोचनकोश एवं ८. श्रुतावतारकथा। इनमेंसे

१. निर्णयसागर प्रेस, बम्बईसे प्रकाशित, १९०९
२. माणिकचन्द्र दि० जैन ग्रन्थमाला, बम्बईसे प्रकाशित, १९०९
३. भारतीय संस्कृतिमें जैन धर्मका योगदान, पृ० १३५
४. प्राकृत थैक्स्ट सोसायटी, वाराणसीसे प्रकाशित, १९६५
५-१२. रइधू साहित्यका आलोचनात्मक परिशीलन, वैशाली, १९७४
१३. आमेर शास्त्र भण्डार, जयपुरकी ग्रन्थ सूचियाँ, भाग २

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अन्तिम तीन रचनाएँ संस्कृत भाषामें तथा पाँचवीं रचना अपभ्रंश भाषामें निबद्ध है। अन्तर्बाह्य साक्ष्योंके आधार पर तथा उनके रचनाकालोंको ध्यानमें रखते हुए यहाँ स्पष्ट विदित हो जाता है कि उन चारों कृतियोंके लेखक भिन्न-भिन्न विबुध श्रीधर हैं, क्योंकि उनका रचनाकाल वि० सं० १४ वीं सदी से १७ वीं सदीके मध्य है जो कि प्रस्तुत पासणाहचरिउके रचनाकाल (वि० सं० ११८९) से लगभग २०० वर्षोंके बाद की है। अतः कालकी दृष्टिसे उनके कर्तृत्वका परस्परमें किसी भी प्रकारका मेल नहीं बैठता।

अवशिष्ट प्रथम चार रचनाएँ अपभ्रंश की हैं। उनकी प्रशस्तियोंसे ज्ञात होता है कि वे चारों रचनाएँ एक ही कवि विबुध श्रीधर की हैं जो विविध आश्रयदाताओंके आश्रयमें लिखी गईं।

कविपरिचय एवं कालनिर्णय

सन्दर्भित 'पासणाहचरिउ' की प्रशस्तिमें विबुध श्रीधरने अपने पिताका नाम गोल्ह एवं माताका नाम वील्ह बताया है। इसके अतिरिक्त, उन्होंने अपना अन्य किसी भी प्रकारका पारिवारिक परिचय नहीं दिया। पासणाहचरिउ की समाप्तिके एक वर्ष बाद प्रणीत अपने वड्ढमाणचरिउमें भी उन्होंने अपना मात्र उक्त परिचय ही प्रस्तुत किया है। वह गृहस्थ था अथवा गृह-विरत त्यागी, इसकी भी कोई चर्चा उन्होंने नहीं की। कविकी 'विबुध' नामक उपाधिसे यह तो अवश्य ही अनुमान लगाया जा सकता है कि अपनी काव्य प्रतिभा के कारण उसे सर्वत्र सम्मान प्राप्त रहा होगा, किन्तु इससे उसके पारिवारिक जीवन पर कोई भी प्रकाश नहीं पड़ता। 'पासणाहचरिउ' एवं 'वड्ढमाणचरिउ' की प्रशस्तिके उल्लेखानुसार कविने **चंद्रप्पहचरिउ** एवं **संतिजिणेसरचरिउ** नामक दो रचनाएँ और भी लिखी थीं किन्तु ये दोनों अभी तक उपलब्ध नहीं हैं। हो सकता है कि कविने अपनी इन प्रारम्भिक रचनाओंकी प्रशस्तियोंमें स्व-विषयक कुछ विशेष परिचय दिया हो, किन्तु यह तो उन रचनाओंकी प्राप्तिके बाद ही कहा जा सकेगा।

विबुध श्रीधरका जन्म अथवा अवसान सम्बन्धी तिथियाँ भी अज्ञात हैं। उनकी जानकारीके लिए सन्दर्भ सामग्रीका सर्वथा अभाव है। इतना अवश्य है कि कविकी अद्यावधि उपलब्ध चार रचनाओंकी प्रशस्तियोंमें उनका रचना समाप्ति-काल अंकित है। उनके अनुसार पासणाहचरिउ तथा वड्ढमाणचरिउका रचना समाप्ति-काल क्रमशः वि० सं० ११८९ एवं ११९० तथा सुकुमालचरिउ एवं 'भविसयत्तकहा' का रचना-समाप्ति काल क्रमशः वि० सं० १२०८ और १२३० है। जैसा कि पूर्वमें बताया जा चुका है 'पासणाहचरिउ' एवं वड्ढमाणचरिउमें जिन पूर्वोक्त 'चंदप्पहचरिउ' एवं संतिजिणेसरचरिउ नामक अपनी पूर्व रचित रचनाओंके उल्लेख कविने किये हैं वे अद्यावधि अनुपलब्ध ही हैं। उन्हें छोड़कर बाकी उपलब्ध चारों रचनाओंका रचनाकाल वि० सं० ११८९ से १२३० तकका सुनिश्चित है। अब यदि यह मान लिया जाय कि कविको उक्त प्रारम्भिक रचनाओंके प्रणयनमें १० वर्ष लगे हों तथा उसने २० वर्षकी आयुसे साहित्य-लेखनका कार्यारम्भ किया हो, तब अनुमानतः कविकी आयु लगभग ७१ वर्षकी सिद्ध होती है और जब तक अन्य ठोस सन्दर्भ-सामग्री प्राप्त नहीं हो जाती, तब तक मेरी दृष्टिसे कविका कुल जीवन काल वि० सं० ११५९ से १२३० तक माना जा सकता है।

निवास स्थान एवं समकालीन नरेश

पासणाहचरिउकी प्रशस्तिमें कविने अपनेको हरयाणा देशका निवासी बताया है और कहा है कि वह कहासे **चंदप्पहचरिउ**की रचना-समाप्तिके बाद यमुना नदी पार करके ढिल्ली आया था। उस समय वहाँ राजा अनंगपाल तोमरका राज्य था जिसने हम्मीर जैसे वीर राजाको भी पराजित किया था। अठारहवीं सदीके अज्ञातकर्तृक "इन्द्रप्रस्थप्रबन्ध"[1] नामक ग्रन्थमें उपलब्ध तोमरवंशी बीस राजाओंमेंसे उक्त अनंगपाल

१. राजस्थान पुरातत्त्व विद्यामन्दिर, जोधपुरसे प्रकाशित, १९६३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अन्तिम बीसवाँ राजा था। इन्द्रप्रस्थमें अनंगपाल नामके तीन राजा हुए जिनमेंसे प्रस्तुत अनंगपाल तीसरा था। इससे जिस हम्मीर वीरको पराजित किया था, प्रतीत होता है कि वह कांगड़ा नरेश हाहुलिराव हम्मीर रहा होगा, जो एकबार हुंका भरकर अरिदलमें जा घुसता था और उसे रौंद डालता था। इसी कारण हम्मीरको हाहुलिरावकी संज्ञा प्रदान की गयी थी जैसा कि पृथिवीराजरासोमें एक उल्लेख मिलता है :

"हां कहते ढीलन करिय हलकारिय अरि मध्य।
ताथें विरद हम्मीरको "हाहुलिराव" सुकथ्य ।।

सम्भवतः इसी हम्मीरको राजा अनंगपालने हराया होगा। युद्धमें उसके पराजित होते ही उसके अन्य साथी-राजा भी भाग खड़े हुए थे जैसा पासणाहचरिउमें कहा है :

संधव सोण कीर हम्मीर संगरू मेल्लि चल्लिया ।।छ।। (पास०, ४।१३।२)

अर्थात् सिन्धु, सोन एवं कीर नरेशोंके साथ राजा हम्मीर भी संग्राम छोड़कर भाग गया।[1]

ढिल्ली-दिल्ली—विबुध श्रीधरने पासणाहचरिउमें जिस "ढिल्लो" नगरकी चर्चा की है, वह आधुनिक "दिल्ली"का ही तत्कालीन नाम है। कविके समयमें वह हरयाणा प्रदेशका एक प्रमुख नगर था। पृथिवीराजरासोमें पृथिवीराज चौहानके प्रसंगोंमें दिल्लीके लिए 'ढिल्ली' शब्दका ही प्रयोग हुआ है। उसमें इस नामकरणकी एक मनोरंजक कथा भी कही गयी है, जिसे तोमरवंशी राजा अनंगपालकी पुत्री अथवा पृथवीराज चौहानकी माताने स्वयं पृथवीराजको सुनायी है। उसके अनुसार राज्यकी स्थिरताके लिए एक ज्योतिषी के आदेशानुसार जिस स्थानपर कीली गाड़ी गई थी, वह स्थान प्रारम्भमें "किल्ली"के नामसे प्रसिद्ध हुआ, किन्तु उस कीलको ढीला कर देनेसे उस स्थानका नाम **ढिल्ली** पड़ गया, जो कालान्तरमें दिल्लीके नामसे जाना जाने लगा। अठारहवीं सदी तक दिल्लीके ग्यारह नामोंमेंसे "ढिल्ली" भी एक नाम माना जाता रहा, जैसा कि **इन्द्रप्रस्थप्रबन्धमें** एक उल्लेख मिलता है :

शक्रपन्था इन्द्रप्रस्था शुभकृत् योगिनीपुरः।
दिल्ली ढिल्ली महापुया जिहानावाद इष्यते ।।
सुषेणा महिमायुक्ता शुभाशुभकरा इति।
एकादस मित नामा दिल्ली पुरा च वर्तते ।। (पद्य १४–१५)

इस प्रकार पासणाहचरिउमें राजा अनंगपाल, राजा हम्मीर वीर एवं ढिल्लीके उल्लेख ऐतिहासिक दृष्टिसे बड़े महत्वपूर्ण हैं। इन सन्दर्भों तथा समकालीन साहित्य एवं इतिहासके तुलनात्मक अध्ययनसे मध्यकालीन भारतीय इतिहासके कई प्रच्छन्न अथवा जटिल रहस्योंका उद्घाटन सम्भव है।

हरयाणा एवं ढिल्लीकी भौगोलिक स्थिति तथा कविकी साहू आल्हण तथा साहू नट्टलके साथ मर्मस्पर्शी भेंट—प्रस्तुत रचनाकी आद्यप्रशस्तिके अनुसार कवि अपनी 'चंदप्पहचरिउ'की रचना समाप्तिके बाद कार्य-व्यस्त असंख्य ग्रामोंवाले हरयाणा प्रदेशको छोड़कर यमुना नदी पार कर ढिल्ली आया था। वहाँ सर्वप्रथम राजा अनंगपालके एक मन्त्री साहू अल्हणसे उसकी भेंट हुई। साहू उसके 'चंदप्पहचरिउ'का पाठ सुनकर इतना प्रभावित हुआ कि उसने कविको नगरके महान साहित्यरसिक एवं प्रमुख सार्थवाह साहू नट्टलसे भेंट करनेका आग्रह किया। किन्तु कवि बड़ा संकोची था। अतः उसने उससे भेंट

१. विशेषके लिए देखिये, भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा प्रकाशित तथा लेखक द्वारा सम्पादित **वड्ढमाणचरिउ** की भूमिका, पृ० ७०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करनेकी अनिच्छा प्रकट करते हुए कहा कि "हे साहू, संसारमें दुर्जनोंकी कमी नहीं। वे कूट कपटको ही विद्वत्ता मानते हैं, सज्जनोंसे ईर्ष्या एवं विद्वेष रखते हैं तथा उनके सद्गुणोंको असह मानकर उनसे दुर्व्यवहार करते हैं। वे उन्हें कभी तो मारते हैं और कभी टेढ़ी-मेढ़ी, भौंहें दिखाते हैं अथवा कभी उनका हाथ, पैर अथवा सिर ही तोड़ देते हैं। मैं तो ठहरा सीधा-सादा, सरल स्वभावी, अतः मैं किसीके घर जाकर उससे नहीं मिलना चाहता।"

किन्तु अल्हण साहूके पूर्ण विश्वास दिलाने एवं बार-बार आग्रह करनेपर कवि साहू नट्टलके घर पहुँचा, तो वह उसके मधुर व्यवहारसे बड़ा सन्तुष्ट हुआ। नट्टलने प्रमुदित होकर कविको स्वयं ही आसनपर बिठाया और सम्मान सूचक ताम्बूल प्रदान किया। उस समय नट्टल एवं श्रीधर—दोनोंके मनमें एक साथ एक ही जैसी भावना उदित हुई। वे परस्परमें सोचने लगे,

"जं पुव्व जन्मि पविरइउ किंपि। इह विहवसरेण परिणवइ तंपि।।"

अर्थात् हमने पूर्वभवमें ऐसा कोई सुकृत अवश्य किया था जिसका आज साक्षात् ही यह मधुर फल हमें मिल रहा है।

साहू नट्टलके द्वारा आगमन प्रयोजन पूछे जाने पर कविने उत्तरमें कहा "मैं अल्हण साहूके अनुरोधसे आपके पास आया हूँ। उन्होंने मुझसे आपके गुणोंकी चर्चा की है और बताया है कि आपने एक 'आदिनाथ मन्दिर'का निर्माण कराकर उसपर 'पचरंगे' झण्डेको फहराया है। आपने जिस प्रकार उस भव्य मन्दिरकी प्रतिष्ठा कराई है, उसी प्रकार आप एक 'पार्श्वनाथचरित' की रचना कराकर उसे भी प्रतिष्ठित कराइये जिससे आपको पूर्ण सुख-समृद्धि प्राप्त हो सके तथा जो कालान्तरमें मोक्षप्राप्तिका भी कारण बन सके। इसके साथ-साथ स्वामीकी एक मूर्ति भी अपने पिताके नामसे उस मन्दिरमें प्रतिष्ठित करा दीजिये।" कविके कथनको सुनकर साहू नट्टलने तत्काल ही अपनी स्वीकृति प्रदान कर दी।

प्रचलित इतिहास सम्बन्धी भ्रान्तियोंके निराकरणमें पासणाहचरिउका योगदान

कुछ विद्वानोंने 'पासणाहचरिउ'के प्रमाण देते हुये नट्टल साहू द्वारा दिल्लीमें पार्श्वनाथ मन्दिरके निर्माण कराए जानेका उल्लेख किया है[1] और विद्वज्जगतमें अब लगभग यही धारणा बनती जा रही है कि साहू नट्टलने दिल्लीमें पार्श्वनाथका मन्दिर बनवाया था जबकि वस्तुस्थिति सर्वथा उससे भिन्न है। यथार्थतः नट्टलने दिल्लीमें पार्श्वनाथ मन्दिर नहीं, आदिनाथ जिन मन्दिरका निर्माण कराया था जैसा कि आद्य प्रशस्तिमें स्पष्ट उल्लेख मिलता है (१।९।१-२)।

उक्त वार्तालाप कवि श्रीधर एवं नट्टल साहूके बीचका है। उस कथनमें 'पार्श्वनाथचरित्र' नामक ग्रन्थके निर्माण एवं उसके प्रतिष्ठित किए जानेकी चर्चा तो अवश्य आई है किन्तु पार्श्वनाथ मन्दिरके निर्माणकी कोई चर्चा नहीं और कुतुबुद्दीन ऐबकने नट्टल साहू द्वारा निर्मित जिस विशाल जैन मन्दिरको ध्वस्त करके उसपर 'कुव्वत-उल-इस्लाम' नामकी मस्जिदका निर्माण कराया था,[2] वह मन्दिर निश्चित ही पार्श्वनाथका नहीं, आदिनाथका ही था। 'पार्श्वनाथ मन्दिर'के निर्माण कराये जानेके समर्थनमें विद्वानोंने जो भी सन्दर्भ प्रस्तुत किये हैं, उनमेंसे किसी एकसे भी उक्त तथ्यका समर्थन नहीं होता। प्रतीत होता है कि उक्त 'पार्श्वचरित'को ही भूलसे 'पार्श्वनाथ मन्दिर' मान लिया गया, जो सर्वथा भ्रमात्मक है।

१-२. दिल्ली जैन डायरेक्टरी, पृ०, ४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इसी प्रकार, साहू नट्टलको अल्हण साहूका पुत्र मान लिया गया[1] जो वास्तविक तथ्यके सर्वथ विपरीत है। मूल ग्रन्थका विधिवत् अध्ययन न करने अथवा उसकी भाषाको न समझने या आनुमानिक आधारोंपर प्रायः ऐसी ही भ्रमपूर्ण बातें कह दी जाती हैं जिनसे यथार्थ तथ्योंका क्रम ही लड़खड़ा जाता है। पासणाहचरिउकी प्रशस्तिके अनुसार अल्हण एवं नट्टल—दोनों घनिष्ट मित्र तो थे, किन्तु पिता-पुत्र नहीं। अल्हण राजमन्त्री था, जबकि नट्टल साहू ढिल्ली नगरका एक सर्वश्रेष्ठ, सार्थवाह, साहित्यरसिक, उदार, दानी एवं कुशल राजनीतिज्ञ था। वह अपने व्यापारके कारण अंग-वंग, कलिंग, गोड़, केरल, कर्नाटक, चोल, द्रविड, पांचाल, सिन्ध, खश, मालवा, लाट, जट्ट, नेपाल, टक्क, कोंकण महाराष्ट्र, भादानक, हरयाणा, मगध, गुर्जर एवं सौराष्ट्र जैसे देशोंमें प्रसिद्ध था तथा वहाँके राजदरबारोंमें उसे सम्मान प्राप्त था। कविने इसी नट्टल साहूके आश्रयमें रहकर पासणाहचरिउकी रचना की थी। इसी रचनाकी आदि एवं अन्तकी प्रशस्तियों एवं पुष्पिकाओंमे साहू नट्टलके कृतित्व एवं व्यक्तित्वका अच्छा परिचय प्रस्तुत किया है।

वर्ण्य विषय

प्रस्तुत 'पासणाहचरिउ'में कुल मिलाकर १२ सन्धियाँ एवं २४७ कडवक हैं। कविने इसे२५०० ग्रन्थाग्र प्रमाण कहा है। उसके वर्ण्यविषयका वर्गीकरण निम्न प्रकार है :

सन्धि १—आद्य प्रशस्तिके बाद वैजयन्त विमानसे कनकप्रभदेवका चयकर वामा देवीके गर्भमें आना।

सन्धि २—राजा हयसेनके यहाँ पार्श्वनाथका जन्म एवं बाललीलाएँ।

सन्धि ३—हयसेनके दरबारमें यवन नरेन्द्रके राजदूतका आगमन एवं उसके द्वारा हयसेनके सम्मुख यवन-नरेन्द्रकी प्रशंसा।

सन्धि ४—राजकुमार पार्श्वका यवन-नरेन्द्रसे युद्ध तथा मामा रविकीर्ति द्वारा उसके पराक्रमकी प्रशंसा।

सन्धि ५—रविकीर्ति द्वारा पार्श्वसे अपनी पुत्रीके साथ विवाह कर लेनेका प्रस्ताव। इसी बीचमें वनमें जाकर जलते हुये नाग-नागिनीको अन्तिम वेलामें मन्त्र प्रदान एवं वैराग्य।

सन्धि ६—हयसेनका शोक सन्तप्त होना। पार्श्वकी घोर तपस्याका वर्णन।

सन्धि ७—पार्श्व तपस्या एवं उनपर कमठ द्वारा किया गया घोर उपसर्ग।

सन्धि ८,९–कैवल्य प्राप्ति, समवशरण–रचना एवं धर्मोपदेश।

सन्धि १०–रविकीर्ति द्वारा दीक्षाग्रहण।

सन्धि ११–धर्मोपदेश।

सिन्ध १२– पार्श्वके भवान्तर तथा हयसेन द्वारा दीक्षाग्रहण। अन्त्य प्रशस्ति।

पासणाहचरिउमें समकालीन राजनीतिक घटनाओंकी झलक

'पासणाहचरिउ' एक पौराणिक महाकाव्य है, अतः उसमें पौराणिक इतिवृत्त तथा दैवी चमत्कार आदि प्रसंगोंकी कमी नहीं। इसका मूल कारण यह है कि कवि विबुध श्रीधरका युग संक्रमणकालीन युग था। कामिनी एवं काञ्चनके लालची मुहम्मद गोरीके आक्रमण प्रारम्भ हो चुके थे, उसकी विनाशकारी लूटपाटने उत्तर भारतको थर्रा दिया था। हिन्दू राजाओंमें भी फूटके कारण परस्परमें बड़ी कलह मची हुई थी। ढिल्लीके तोमर राजा अनङ्गपालको अपनी सुरक्षा हेतु कई युद्ध करने पड़े थे। कविने जिस हम्मीर वीरके अनङ्गपाल द्वारा पराजित किए जानेकी चर्चा की है, सम्भवतः वह घटना कविकी आँखों देखी रही होगी। कविने कुमार पार्श्वके अभयराजके साथ तथा त्रिपृष्ठके हयग्रीवके साथ जैसे क्रमबद्ध एवं व्यवस्थित युद्ध वर्णन किये हैं, वे वस्तुतः कल्पना प्रसूत नहीं, किन्तु हिन्दू-मुसलमानों अथवा हिन्दू राजाओंके पारस्परिक युद्धोके आँखों देखे

१. तीर्थंकर महावीर और उनकी आचार्य-परम्परा, पृ० ४।१३८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अथवा विश्वस्त गुप्तचरों द्वारा सुने गये यथार्थ वर्णन जैसे प्रतीत होते हैं। उसने उन युद्धोंमें प्रयुक्त जिन शस्त्रास्त्रोंकी चर्चाकी है, वे पौराणिक, ऐन्द्रजालिक अथवा दैवी नहीं, अपितु खुरपा. कृपाण, तलवार, धनुषबाण जैसे वे ही अस्त्र-शस्त्र हैं जो कविके समयमें लोक प्रचलित थे। आज भी वे हरयाणा एवं दिल्ली प्रदेशोंमें उपलब्ध हैं और उन्हीं नामोंसे जाने जाते हैं। ये युद्ध इतने भयङ्कर थे कि लाखों-लाखों विधवा नारियों एवं अनाथ बच्चोंके करुण क्रन्दनको सुनकर संवेदनशील कविको लिखना पड़ा था :

दुक्करु होई रणंगणु। रिउ वाणावलि पिहिय जहंगणु।
संगरणामु जि होई भयंकरु। दुरय-दुरय रह सुहड खयंकरु ॥ पा० २।१४।३,५

कुछ मनोवैज्ञानिक वर्णन एवं नवीन मौलिक उपमाएँ

कवि श्रीधर भावोंके अश्रुत चितेरे हैं। यात्रा-मार्गोंमें चलने वाले चाहे सैनिक हो अथवा अटवियोंमें उछल-कूद करने वाले बन्दर, वन विहारोंमें क्रीड़ाएँ करने वाले प्रेमी-प्रेमिकाएँ हों अथवा आश्रमोंमें तपस्या करने वाले तापस, राज दरबारोंके सूर सामन्त हों अथवा साधारण प्रजाजन, उन सभीके मनोवैज्ञानिक वर्णनोंमें कविकी लेखनीने अद्भुत चमत्कार दिखलाया है। इस प्रकारके वर्णनोंमें कविकी भाषा भावानुगामिनी एवं विविध रस तथा अलंकार उनका अनुकरण करते हुए दिखाई देते हैं।

पार्श्व प्रभु विहार करते हुए तथा कर्वट, खेड, मंडव आदि पार करते हुए जब एक भयानक अटवीमें पहुँचते हैं, तब वहाँ उन्हे मदोन्मत्त गजाधिप, द्रुतगामी हरिण, भयानक सिंह, घुरघुराते हुए मार्जार एवं उछल-कूद करते हुए लंगूरोंके झुण्ड दिखाई पड़ते हैं। इस प्रसङ्गमें कवि द्वारा प्रस्तुत लंगूरोंका वर्णन बड़ा स्वाभाविक बन पड़ा है (७।१४।४-१६)।

अन्य वर्णन प्रसङ्गोंमें भी कविका कवित्व चमत्कारपूर्ण बन पड़ता है। इनमें कल्पनाओंकी उर्वरता, अलङ्कारकी छटा एवं रसोंके अमृतमय प्रवाह दर्शनीय हैं। इस प्रकारके वर्णनोंमें ऋतु-वर्णन, अटवी, वर्णन, सन्ध्या, रात्रि एवं प्रभात-वर्णन तथा आश्रम-वर्णन आदि प्रमुख हैं। कविकी दृष्टिमें सन्ध्या किसीके जीवनमें हर्ष उत्पन्न करती है, तो किसीके जीवनमें विषाद। वस्तुतः वह हर्ष एवं विषादका विचित्र सङ्गमकाल है। जहाँ कामीजनों, चोरों, उल्लुओं एवं राक्षसोंके लिए वह श्रेष्ठ वरदान है, वहीं नलिनीदलके लिए घोर विषादका काल। वह उसी प्रकार मुरझा जाता है जिस प्रकार इष्टजनके वियोगमें बन्धु-बान्धवगण। सूर्यके डूबते ही उसकी समस्त किरणें अस्ताचलमें तिरोहित हो गई हैं। इस प्रसङ्गमें कवि उत्प्रेक्षा करते हुये कहता है कि विपत्तिकालमें अपने कर्मोंको छोड़कर और कौन किसका साथ दे सकता है? सूर्यके अस्त होते ही अस्ताचल पर लालिमा छा रही है जो ऐसी प्रतीत हो रही है मानो अन्धकारके गुपठा ललाहपर किसीने सिन्दूरका तिलक ही जड़ दिया हो। अन्धकारके गुफा ललाटपर किसीने सिन्दूरका तिलक जड़ ही दिया हो। यह कवि-कल्पना सचमुच ही अद्भुत एवं नवीन है।

कविका रात्रि-वर्णन प्रसङ्ग भी कम चमत्कारपूर्ण नहीं है। वह कहता है कि समस्त संसार घोर अन्धकारकी गहराईमें डूबने लगा है। इस कारण विलासिनियोंके कपोल रक्ताभ हो उठे हैं तथा उनके नीवीबन्ध शिथिल होने लगे हैं।

महाकवि सूर एवं जायसी पर प्रभाव

कवि श्रीधरने शिशुकी लीलाओंका भी बड़ा सुन्दर वर्णन किया है। उनकी बाल एवं किशोर-लीलाओं तथा उनके असाधारण सौन्दर्य एवं अङ्ग-प्रत्यङ्गकी भाव-भङ्गिमाओंके चित्रणोंमें कविकी कविता मानो

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सरलताका स्रोत बनकर उमड़ रही है। वहाँ कवि कहता है, "शिशु पार्श्व कभी तो माताके अमृतमय दुग्धका पान करते, कभी अँगूठा चूसते, कभी मणि जटित चमचमाती गेंद खेलते, तो कभी तुतली बोलीमें कुछ बोलनेका प्रयास करते। कभी तो वे स्वयं रेंग-रेंगकर चलते और कभी परिवारके लोगोंकी अँगुली पकड़कर चलते। जब वे माता-पिताको देखते, तो अपनेको छिपानेके लिए हथेलियोंसे अपनी ही आँखें ढँक लेते। चन्द्रमाको देखकर वे हँस देते थे। उनका जटाजूटधारी शरीर निरन्तर धूलि-धूसरित रहता था। खेलते समय उनकी करधनीकी शब्दायमान किंकिणियाँ सभीको मोहती रहती थीं।" कविके इस बाल-लीला वर्णनने हिन्दीके भक्त कवि सूरदासको सम्भवतः सर्वाधिक प्रभावित किया है। पार्श्वकी बाल-लीलाओंके वर्णनोंका प्रभाव कृष्णके बाल्य वर्णनमें स्पष्ट रूपेण दृष्टिगोचर होता है। कहीं-कहीं तो अर्धालियोंमें भी यत्किञ्चित् हेर-फेरके साथ उनका सूर द्वारा उपयोग कर लिया गया प्रतीत होता है। यथा :

श्रीधर—अविरल धूलि धूसरिय गत्त, २।१५।५
सूर—धूरि धूसरित गात, १०।१००।३
श्रीधर—होहल्लरु (ध्वन्यात्मक), २।१४।८
सूर—हलरावे (ध्वन्यात्मक), १०।१२८।८
श्रीधर—खलियक्खर वयणिहि वज्जरन्तु, २।१४।३
सूर—बोलत श्याम तोतरी बतियाँ, १०।१४७
श्रीधर—परिवारंगुलि वग्गउ सरन्तु, २।१४।४
सूर—हरिकौं लाइ अंगुरी चलन सिखावत, १०।१२८।८

इस प्रकार दोनों कवियोंके वर्णनोंकी सदृशताओंको देखते हुए यदि संक्षेपमें कहना चाहें तो कह सकते हैं कि श्रीधरका संक्षिप्त बाल-वर्णन सूरदास कृत कृष्णकी बाल-लीलाओंके वर्णनके रूपमें पर्याप्त परिष्कृत एवं विकसित हुआ है।

मध्यकालीन उत्तरभारतीय वनस्पति जगत्

कवि श्रीधर द्वारा वर्णित विविध वनस्पतियाँ भी कम आश्चर्यजनक नहीं। अटवी वर्णनके प्रसङ्गमें विविध प्रकारके वृक्ष, पौधे, लतायें, जिमीकन्द आदिके वर्णनोंमें कविने मानों सारे प्रकृति जगत्को ही साक्षात् उपस्थित कर दिया है। आयुर्वेद एवं वनस्पतिशास्त्रके मध्यकालीन इतिहासकी दृष्टिसे कविकी यह सामग्री बड़ी महत्त्वपूर्ण है। कवि द्वारा वर्णित वनस्पतियोंका वर्गीकरण निम्न प्रकार किया जा सकता है।

शोभावृक्ष—हिंताल, तालूर, साल, तमाल, मालूर, धर, धम्मण, बंस, खदिर, तिलक, अगस्त्य' प्लक्ष, चन्दन।

फलवृक्ष—आम्र, कदम्ब, नींबू, जम्बीर, जामुन, मातुलिंग, नारंगी, अरलू, कोरंटक, अंकोल्ल, फणिस, प्रियंगु, खजूर, तिन्दुक, कैंथ, ऊमर, कठूमर, चिंचिणी (चिलगोजा), नारिकेल, वट, सेंवल, ताल।

पुष्पवृक्ष—चम्पक, कचनार, कणवीर (कनेर), टउह, कउह, बबूल, जासवण्ण (जाति ?) शिरीष, पलाश, बकूल, मुचकुन्द, अर्क, मधुवार।

फल एवं पुष्प लताएँ—लवंग, पूगफल, विरिहिल्ल, भल्लु, केतकी, कुरव, कर्णिकार, पाटलि, सिन्दूरी, दाक्षा, पुनर्नवा, वाण, वोर, कच्चूर।

कंद—जिमीकन्द, पीलू, मदन एवं गंगेरी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विबुध श्रीधरके उक्त वनस्पति वर्णनने परवर्ती कवियोंमें सूफी कवि जायसीको सम्भवतः बहुत अधिक प्रभावित किया है। इस प्रसंगमें जायसी कृत पद्मावत[1] (२।१०-१३ एवं २०।१-१६) के सिंहलद्वीप वर्णन एवं बसन्तखण्डके अंश पासणाहचरिउके उक्त अंशसे तुलनीय हैं। दोनोंके अध्ययनसे यह प्रतीत होता है कि जायसीका वनस्पति-वर्णन श्रीधरके वनस्पति-वर्णनका पल्लवित एवं परिष्कृत रूप है।

समकालीन लौकिक शिक्षा-पद्धति

"पासणाहचरिउ" में कुमार पार्श्वके लिए जिन शिक्षाओंको प्रदान किये जानेकी चर्चा आई है, वे प्रायः समकालीन प्रचलित एवं क्षत्रिय राजकुमारों तथा अमीर उमराओंको दी जानेवाली लौकिक शिक्षायें ही हैं। कविने इस प्रसंगमें किसी प्रकारका साम्प्रदायिक व्यामोह न दिखाकर विशुद्ध यथार्थ, लौकिक एवं राष्ट्रीय रूपको प्रदर्शित किया है। इन शिक्षाओंका विभाजन निम्न चार वर्गोंमें किया जा सकता है :

१. आत्मविकास एवं जीवनको अलंकृत करनेवाली विद्यायें (साहित्य)

श्रुतांग, वेद, पुराण, आचार शास्त्र, व्याकरण, सप्तभंगीन्याय, लिपिशास्त्र, लेखनक्रिया (चित्र-निर्माणविधि), सामुद्रिक शास्त्र, कोमल काव्यरचना, देशभाषा कथन, नवरस, छन्द, अलंकार, शब्दशास्त्र एवं न्यायदर्शन।

२. राष्ट्रीय सुरक्षा हेतु आवश्यक विद्यायें (कलाएँ)

गज एवं अश्व विद्या, शर-शस्त्रादि संचालन, व्यूह-संरचना, असि एवं कुन्त संचालन, मुष्टि एवं मल्लयुद्ध, असि-बन्धन, शत्रुनगर-रोधन, रणमुखमें ही शत्रुरोधन, अग्नि एवं जल बन्धन, वज्र-शिलावेधन, अश्व, धेनु एवं गजचक्रका मूल बन्धन।

३. व्यावहारिक विद्याएँ (कलाएँ)

अंजन-लेपन, नर-नारी-प्रसाधन, अंग-मर्दन, सुर-भवन (मन्दिर) आदिमें लेपन (चित्रकारी) का ज्ञान, नर-नारी वशीकरण, पाँच प्रकारके घण्टोंका वादन, चित्रोपल, स्वर्णतरुके तागोंका निर्माण, कृषि एवं वाणिज्य विद्यायें, काल परिवंचण (अर्थात् अचूक ओषधि शास्त्रका ज्ञान एवं औषधि निर्माण विद्या), सर्प विद्याका ज्ञान, नवरसयुक्त भोजन निर्माण विधि एवं रति विस्तार (कामशास्त्र)

४. संगीत एवं वाद्य सम्बन्धी विद्याएँ (ललित कलाएँ)

मन्दल, टिविल, ताल, कंसाल, भंभा, भेरी, झल्लरी, काटल, करड़, कंबु, डमरू, डक्क, हुडुक्क एवं टट्टरीका ज्ञान।

उपर्युक्त विद्याओंकी सूचीमें एक भी अलौकिक विद्याका उल्लेख नहीं। कविने युगानुकूल उन्हीं समकालीन लोकप्रचलित विद्याओंका वर्णन किया है जो एक उत्तरदायित्वपूर्ण मध्यकालीन राष्ट्राध्यक्षको सामाजिक विकासके लिए अत्यावश्यक, उन्नत, प्रभावपूर्ण तथा सर्वांगीण व्यक्तित्वके विकासके लिए अनिवार्य थीं। इसीलिए कविका नायक पार्श्व जैन होकर भी चारों वेदों एवं अष्टादश पुराणोंका अध्येता बताया गया है क्योंकि उसके राज्यमें विविध धर्मानुयायियोंका निवास था। संगीतमें भी जिन वाद्योंकी चर्चा कविने की है, वे भी देवकृत अथवा पौराणिक वाद्य नहीं, अपितु वे वाद्य हैं जो हरयाणा एवं दिल्ली तथा उनके आसपासके प्रदेशोंमें प्रचलित थे। अधिकांश वाद्य पंजाब एवं हरयाणामें आज भी उन्हीं नामोंसे जाने जाते हैं तथा भांगड़ा या अन्य नृत्योंमें प्रायः उन्हींका अधिक प्रयोग होता है।

---

१. साहित्य-सदन, चिरगाँव, झाँसीसे प्रकाशित।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रचुर भौगोलिक सामग्री

कवि श्रीधर मात्र भावनाओंके ही चितेरे नहीं, अपितु उन्होंने जिस भूखण्ड पर जन्म लिया था, उसके कण-कणके अध्ययनका भी प्रयास किया था। यही कारण है कि पासणाहचरिउमें विविध नगर एवं देशवर्णन, नदी, पहाड़, सरोवर, वनस्पतियाँ, विविध मनुष्य जातियाँ, उनके विविध व्यापार, भारत भूमिका तत्कालीन राजनीतिक विभाजन, विविध देशोंके प्रमुख उत्पादन तथा उनके आयात-निर्यात सम्बन्धी अनेक भौगोलिक सामग्रियोंके चित्रण भी कविने किये हैं। उदाहरणार्थ कुछ सामग्री यहाँ प्रस्तुत की जाती है।

कुमार पार्श्व जिस समय काशी राज्यके युवराज पदपर प्रतिष्ठित किए जाते हैं, उस समय निम्न छब्बीस देशोंके नरेश उन्हें सम्मान प्रदर्शन हेतु तलवार हाथमें लेकर उनके राज दरबारमें पधारते हैं। उक्त देशोंके वर्गीकृत नाम इस प्रकार हैं :

पूर्व भारत—वज्रभूमि, अंग, बंग, कलिंग, मगध, पापा, खश एवं गौड़।

उत्तर भारत—हरयाणा, टक्क, चौहान, जालन्धर, हाण एवं हूण।

पश्चिम भारत—गुर्जर, कच्छ और सिन्धु।

दक्षिण भारत—कर्नाटक, महाराष्ट्र, चोड़ एवं राष्ट्रकूट।

मध्य भारत—मालवा, अवध, चन्दिल्ल, भादानक एवं कलचुरी।

युवराज पार्श्व जब यवनराजके साथ युद्ध करने हेतु प्रस्थान करने लगते हैं, तब निम्न नरेशोंने अपने-अपने देशोंमें निर्मित निम्न सुप्रसिद्ध वस्तुएँ युवराज पार्श्वकी सेवामें भेंट स्वरूप भेजीं।

मणिमेखलाएँ एवं हारलताएँ—कीर देश, पाञ्चाल एवं टक्क देश, पालम्ब एवं जालन्धर।

बाणों द्वारा अभेद्य मुकुट—सोन देश।

केयूर—सिन्ध देश।

कंकण—हम्मीर राजा द्वारा प्रेषित।

कुण्डल—मालव।

निवसन वस्त्र—खश।

चूड़ारत्न—नेपाल।

ऐसा प्रतीत होता है कि ग्यारहवीं-बारहवीं सदीमें उक्त देशोंमें इन वस्तुओंका विशेष रूपसे निर्माण किया जाता था तथा उनका दूसरे देशोंमें निर्यात भी किया जाता रहा होगा। असम्भव नहीं कि इन व्यापारोंसे कवि श्रीधरके आश्रयदाता साहू नट्टलका भी सम्बन्ध रहा हो क्योंकि कविने साहू नट्टलका जिन-जिन देशोंसे सम्बन्ध बतलाया है, इस सूचीमें उक्त देशोंका भी नाम आता है। मध्यकालीन भारतकी आर्थिक एवं व्यापारिक दृष्टिसे तो ये उल्लेख महत्त्वपूर्ण हैं ही, तत्कालीन कला, सामाजिक अभिरुचि एवं विविध निर्माण सामग्रीके उपलब्धि-स्थलोंकी दृष्टिसे भी उनका अपना विशेष महत्त्व है।

काशी देशकी ओरसे यवनराजके साथ लोहा लेनेवाले राज्योंसे नेपाल, जालन्धर, कीरट्ठ एवं हमीरने हाथियोंके समान चिंघाड़ते हुए, सिन्ध, सोन एवं पाञ्चालने भीमके समान मुखवाले बाण छोड़ते हुए तथा मालव, टक्क एवं खशने दुर्दम यवनराजके साथ विषम युद्ध करके काशी नरेशका साथ दिया। प्रतीत होता है कि उक्त राज्योंने अपना महासंघ बनाकर काशी नरेशका साथ दिया होगा, जिसमें कर्नाटक, लाट, कोंकण, वराट, विकट, द्राविड़, भृगुकच्छ, कच्छ, अति विकट वत्स, डिंडीर, अत्यन्त दुःसाध्य विन्ध्य, कोशल,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मरट्ठ एवं धृष्ट सौराष्ट्रने भी उक्त महासंघका पूरा पूरा साथ दिया था और इनकी सम्मिलित शक्तिने ही यवनराजको बार-बार पीछे हटा दिया था।

इतने देशोंके नामोंके एक साथ उल्लेख अपना विशेष महत्त्व रखते हैं। यवराज सुबुक्तगीन एवं उसके उत्तराधिकारियों तथा मुहम्मद गोरीके आक्रमणोंसे जब धन, जन, सामाजिक एवं राष्ट्रीय प्रतिष्ठाकी हानि एवं देवालयोंका विनाश किया जा रहा था, तब प्रतीत होता है कि राष्ट्रीय सुरक्षा एवं समान स्वार्थों को ध्यानमें रखते हुए पड़ोसी एवं सुदूरवर्ती राज्योंने उक्त यवन राजाओंके आक्रमणोंके प्रतिरोधमें सम्भवतः तोमरवंशी राजा अनंगपाल तृतीयके साथ अथवा अपना कोई स्वतन्त्र महासंघ बनाया होगा। कविने सम्भवतः उसीकी चर्चा पार्श्व एवं यवनराजके माध्यमसे प्रस्तुत की है। यथार्थतः यह बड़ा रोचक एवं गम्भीर शोधका विषय है। शोधकर्ताओं एवं इतिहासकारोंको इस दिशामें तुलनात्मक गम्भीर अनुसन्धान करनेकी आवश्यकता है।

कविने प्रसंगवश हरयाणा, दिल्ली, कुशस्थल, कालिन्दी, वाराणसी एवं मगध आदिके भी सुन्दर वर्णन किये हैं तथा छोटी-छोटी भौगोलिक इकाइयों (कर्वट, खेड, मडम्ब, आराम, द्रोणमुख, संवाहन, गाम, पट्टन, पुर, नगर आदि) के भी उल्लेख किये हैं। समकालीन दिल्लीका आँखों देखा हाल इस कविने जितने प्रामाणिक ढंगसे किया है, इतिहासकी दृष्टिसे वह अनूठा है। पूर्वोक्त वर्णनों एवं इन उल्लेखोंको देखकर यह स्पष्ट है कि कविको मध्यकालीन भारतका आर्थिक, व्यापारिक, प्राकृतिक, मानवीय एवं राजनीतिक भूगोलका अच्छा ज्ञान था। कवि द्वारा प्रस्तुत सन्दर्भ सामग्री निश्चय ही तत्कालीन प्रामाणिक इतिहास तैयार करनेमें सहायक सिद्ध हो सकती है।

रस-संयोजन

पासणाहचरिउका अंगी रस शान्त है, किन्तु शृंगार, वीर और रौद्ररसोंका भी उसमें सम्यक् परिपाक हुआ है। कविने युद्धके लिए प्रस्थान, संग्राममें चमचमाती तलवारें, लड़ते हुए वीरोंकी हुंकारों एवं योद्धाओंके शौर्य-वीर्य आदिके वर्णनोंमें वीर-रसकी सुन्दर उद्भावना की है। पार्श्वकुमारको उसके पिता अश्वसेन जब युद्धकी भयंकरता समझाकर उन्हें युद्धमें न जानेकी सलाह देते हैं, तब पार्श्व अत्यन्त वीरतापूर्ण उत्तर देते हैं (पा० च०, ३।१२)।

राजा अरविन्द कमठके दुराचारसे खिन्न होकर क्रोधातुर हो जाता है और उसे नाना प्रकारके दुर्वचनों द्वारा अपमानित करता है, तब राजाके रौद्र रूपका कविने चित्रण कर रौद्र-रसकी अच्छी उद्भावना की है। इसी प्रकार पार्श्वके वैराग्यके समय परिवार एवं पुरवासियोंके वियोगके अवसरपर करुण रस तथा जब पार्श्व वनमें जाकर दीक्षित हो जाते हैं, उस सन्दर्भमें शान्त-रसका सुन्दर परिपाक हुआ है।

शृंगार रसके भी जहाँ-तहाँ उदाहरण मिलते हैं। कविने नगर, वन, पर्वत, नर एवं नारियोंके सौन्दर्यका मोहक चित्रण किया है, किन्तु यह शृंगार रतिभावको पुष्ट न कर विरक्तिको ही पुष्ट करता है। माता वामादेवीके सौन्दर्यका वर्णन इसका उदाहरण है।

समकालीन लोक-शब्दावली

पासणाहचरिउ एक प्रौढ़ अपभ्रंश रचना है, किन्तु उसमें कविने जहाँ-तहाँ अपभ्रंशके साथ-साथ तत्कालीन लोक-प्रचलित कुछ ऐसे शब्दोंके भी प्रयोग किये हैं जो आधुनिक बोलियोंके समकक्ष हैं। इनमेंसे कुछ शब्द तो आज भी हूबहू उसी रूपमें प्रचलित हैं। इस प्रकारकी शब्दावलीसे कविकी कवितामें प्राणवत्ता, वर्णन प्रसंगोंमें रोचकता एवं गतिशीलता आई है। उदाहरणार्थ कुछ शब्द यहाँ प्रस्तुत हैं : वार-वार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(बारम्बार ३।८।१), हल्ला (शोरगुल, ४।१८।४), फाड़ना (४।९।१), थोड़ा (१०।५।३), अज्जकल्ल (१०।१४।७), डमरु (३।१०।११, ३।११।५), पतला (१।१३।१०), हौलें-हौलें (धीरे-धीरे, ३।१७।२), चप्प (चापना, ५।७।८), चांपना (७।११।४), चुल्ली (चूल्हा, ४।१।१४), लक्कड़ (६।८।१२), पण्ही (जूता, ४।९।४), कुमलाना (मुरझाना ३।१८।८), खुरुप्प (खुरपा, ४।१९।१३, ५।११।९), धोवन (धोन ३।१८।२), लट्ठी (लाठी, ३।११।३), मुट्ठि (३।११।४), शट्ट (भीड़, ३।६।१२), चिंध, (धज्जी ४।९।१), तोड (तोड़ना, ४।९।८), धुत्त (नशेमें चूर, ३।१३।२), चोजु (आश्चर्य १।१३।९), अन्धार (अन्धेरा, ३।१९।७), रेल्ल (धक्का, मुक्की, ७।१३।१४), पेल्ल (३।८।४), बोल्लाविय (बुलाना, ३।८।४), उट्ठिउ (उठा, ३।८।१), झाडन्त (झाड़कर, ४।९।८), ढुक्क (ढूँकना, झांकना, ३।१८।११, ४।१९।७), बुड (डूबना, ३।१८।३), पाण्डत (७।९।२), टालन्त (टालना, ७।९।९), कढ्ड (निकालना, ४।२०।१८), चिक्कार (ध्वन्यात्मक, ५।१।५, ५।३।१४) ।

उपर्युक्त शब्दावलीमेंसे अधिकांश शब्द हरयाणवी, राजस्थानी, बुन्देली एवं बघेलीमें आज भी उसी प्रकार अथवा यत्किंचित् हेरफेरके साथ प्रयुक्त होते हैं ।

कवि श्रीधर अपभ्रंशके साथ-साथ संस्कृत भाषाके भी समानाधिकारी विद्वान् थे, यह उनकी अन्त्य प्रशस्तिमें लिखित संस्कृत श्लोकोंसे स्पष्ट ज्ञात होता है । कविने शार्दूलविक्रीडित, वसन्ततिलका एवं आर्या छन्दोंमें अपने आश्रयदाता नट्टल साहूको आशीर्वाद देते हुए उसकी वंशावली प्रस्तुत की है । नट्टलका परिचय देते हुए कवि लिखता है :

पश्चाद् बभूव शशिमण्डलभासमानः ख्यातः क्षितीश्वरजनादपि लब्धमानः ।
सद्दर्शनामृतरसायनपानपुष्टः श्रीनट्टलः शुभमना क्षपितारिदुष्टः ॥

उक्त सन्दर्भ सामग्रियोंके आधारपर पासणाहचरिउ अपभ्रंश साहित्यकी एक महनीय कृति सिद्ध होती है । स्थानाभावके कारण उक्त रचनाके सर्वांगीण अध्ययनसे जो सन्दर्भ सामग्री एकत्रित हुई, उसे अनेक सीमाओंमें बँधे रहनेके कारण पूरा विस्तार नहीं दिया जा सका है । फिर भी, जो संक्षिप्त अध्ययन यहाँ प्रस्तुत किया गया, उससे स्पष्ट है कि वस्तुतः यह ग्रन्थ समकालीन विविध परिस्थितियोंका एक सुन्दर प्रामाणिक आकर ग्रन्थ है जिसके विधिवत् अध्ययनसे अनेक गूढ़ तथ्य प्रकाशित हो सकते हैं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org